चुनौती 2019

क्या मोदी दिला पाएंगे ‘दूसरी आजादी’

सन 2019 तक ‘हर घर शौचालय’ प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का महत्वाकांक्षी सपना है। क्या यह सपना पूरा होने जा रहा है? *डाउन टू अर्थ* के अनुमान के मुताबिक, खुद पीएम मोदी के चुनाव क्षेत्र में यह लक्ष्य साल 2048 में जाकर पूरा होगा। सोचने की बात है कि जो देश चांद पर झंडे गाड़ना चाहता है, वह अपने नागरिकों को शौचालय जैसी मूलभूत सुविधा उपलब्ध कराने में नाकाम क्यों हो रहा है? आंकड़ों और जमीनी हकीकत से रूबरू कराती विशेष रिपोर्ट

सुष्मिता सेनगुप्ता और रश्मि वर्मा

उदाहरण 1: कोटला गांव, हरियाणा

कामयाबी के पीछे छिपी नाकामी

हरियाणा के मेवात जिले के कोटला गांव के घरों में शौचालय होना एक बड़ी बात है। विडंबना यह है कि हरियाणा की गिनती बड़े फख्र के साथ उन पांच राज्यों में हो रही है जो ‘स्वच्छ भारत मिशन’ के तहत नागरिकों को शौचालय उपलब्ध कराने में सबसे आगे हैं। जबकि इसी राज्य के एक गांव कोटला में बमुश्किल एक प्रतिशत घरों में शौचालय हैं। कोटला गांव की 32 वर्षीय आसिया पूछती हैं, “मैं राज्य की सफलता का जश्न क्यों मनाऊं?” उनका मानना है कि शौचालय की कमी की वजह से गांव में बीमारियां फैलती रही हैं और यह स्वास्थ्य के लिए गंभीर समस्या है। गांव में हर कोई कहता है कि उनका अस्पताल में आना-जाना बढ़ गया है। इलाज पर जो खर्च होता है सो अलग! लोगों के अस्पताल पहुंचने का मुख्य कारण दस्त, आंत्रशोथ जैसी स्वच्छता संबंधित बीमारियां हैं।

उदाहरण 2: पलुखुला गांव, उड़ीसा

नाकामी के बीच छिपी कामयाबी

उड़ीसा की गिनती उन पांच राज्यों में होती है जो स्वच्छता संबंधित पायदानों पर सबसे नीचे हैं। राज्य के गंजाम जिले के पलुखुला गांव की 64 वर्षीय आदिवासी महिला ललिता मलिक की कहानी मेवात की आसिया से एकदम अलग है। ललिता के गांव पलुखुला के सभी घरों में शौचालय है। वह गर्व से कहती हैं, “हमारे गांव में चौबीसो घंटे पानी आता है।” गांव वालों को घर में शौचालय की आदत पड़ चुकी है। वह भी ऐसे जिले में जहां बड़ी तादाद में लोग खुले में शौच जाते हैं और जिसकी वजह से यह जिला पूरे राज्य में हंसी का पात्र रहा है। यहां स्वच्छता के कमी की वजह से एक भी व्यक्ति बीमार नहीं मिलेगा। सफाई को लेकर लोगों में कुछ इस तरह का जूनून है कि परिवारों ने भविष्य में शौचालय निर्माण के लिए भी पैसा जमा कर रखा है।

फोटो : विकास चौधरी/सीएसई

ये **दो कहानियां** भारत के स्वच्छता संघर्ष का सटीक चित्रण करती हैं। कई राज्यों में अच्छे प्रयासों के बावजूद देश के हर कोने में लाखों लोग आज भी खुले में शौच के लिए जाते हैं। इसके कारण लोगों को कई सामाजिक और स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं झेलनी पड़ती हैं। स्वच्छता की कमी का होना एक तरह से सजा-ए-मौत जैसा है: भारत में हर 10 मौतों में से एक स्वच्छता की कमी से जुड़ी है।

खुले में शौच से मुक्ति के लिए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 2 अक्टूबर, 2014 को भारत के सबसे बड़े अभियान 'स्वच्छ भारत मिशन' की शुरुआत की थी। पीएम मोदी ने 2 अक्टूबर, 2019 तक देश के हर घर में शौचालय का लक्ष्य रखा है। इसी दिन देश राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 150वीं जयंती मनाएगा। एक बार गांधी जी ने कहा था कि स्वच्छता, स्वतंत्रता से कहीं ज्यादा आवश्यक है। अगर देश के हर घर में शौचालय हो तो इसे सही मायने में 'दूसरी आजादी' कहा जा सकता है।

इस बात के लिए भारत को शर्मिंदगी उठानी पड़ती है कि यहां सबसे अधिक घरों में शौचालय नहीं हैं। विश्व में कुल 95 करोड़ लोग खुले में शौच करते हैं जिनमें से 60 प्रतिशत भारतीय हैं। इस मामले में भारत अफ्रीका के कई बेहद गरीब देशों से भी पीछे है। विश्व स्वास्थ्य संगठन और यूनिसेफ के ताजा सर्वेक्षण के अनुसार, अफ्रीका के तीन बड़े सब-सहारन देशों, नाइजीरिया में 25 प्रतिशत, इथियोपिया में 29 प्रतिशत और कांगो में 10 प्रतिशत परिवार खुले में शौच जाते हैं, जबकि 2011 की जनगणना के अनुसार 50 फीसदी भारतीय खुले में शौच करते हैं। ग्रामीण भारत में यह आंकड़ा 67 फीसदी है।

मामला सिर्फ खुले में शौच जाने की शर्म या स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों का नहीं है। इस अभिशाप की वजह से होने वाला आर्थिक नुकसान भी बहुत है। 'टू कास्ट ऑफ सेनिटेशन' नाम की एक हालिया रिपोर्ट के अनुसार, शौचालय की सुविधा नहीं मिलने से विश्व अर्थव्यस्था को वर्ष 2015 में करीब 14,90,300 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ (गणना 12 सितम्बर, 2016 को डॉलर के मुकाबले रुपये की कीमत के आधार पर)। इस आर्थिक नुकसान का सबसे ज्यादा करीब 77 फीसदी बोझ एशिया-प्रशांत देशों पर पड़ता है। इस लिहाज से भारत को सबसे अधिक नुकसान उठाना पड़ रहा है। वर्ष 2015 में भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) को खुले में शौच की वजह से करीब 7,13,400 करोड़ रुपये का नुकसान होने का अनुमान है। इस नुकसान को यूं समझिये कि यह राशि देश के स्वास्थ्य बजट से 19 गुना अधिक है। यह रिपोर्ट लिक्विसल ग्रुप कॉरपोरेशन, वाटर एड और ऑक्सफोर्ड इकोनॉमिक्स ने संयुक्त रूप से प्रकाशित की है।

2 अक्टूबर, 2019 तक देश के हर घर में शौचालय का लक्ष्य रखा गया है। इसी दिन महात्मा गांधी की 150वीं जयंती मनाई जाएगी। गांधी जी ने कहा था कि स्वतंत्रता से ज्यादा स्वच्छता आवश्यक है

हर सेकंड एक शौचालय

शौचालय निर्माण के मामले में पिछले दो वर्षों में आखिर हमने कितनी प्रगति की है? क्या हम 2019 तक सबको शौचालय उपलब्ध कराने के अपने लक्ष्य को हासिल करने की दिशा में बढ़ रहे हैं? इसके लिए पेयजल और स्वच्छता मंत्रालय की वेबसाइट पर 15 अगस्त, 2016 तक उपलब्ध आंकड़ों का *डाउन टू अर्थ* ने विश्लेषण किया। सरकारी तौर पर मात्र यही आंकड़े उपलब्ध हैं, जिनसे स्वच्छ भारत मिशन की अब तक की प्रगति का मूल्यांकन किया जा सकता है। अक्टूबर, 2019 का लक्ष्य पूरा करने के लिए 36 महीनों के अंदर 8.24 करोड़ शौचालय बनाने होंगे। अगर सरकार दिन-रात काम करे तो अगले 36 महीनों तक प्रति घंटा 3,179 शौचालय या प्रति सेकंड एक शौचालय का निर्माण जरूरी है।

पिछले साल शौचालय निर्माण के आंकड़ों पर गौर करें तो स्पष्ट है कि सरकार अपना 2019 का लक्ष्य पाने में संभवतः नाकाम रहेगी। वित्त वर्ष 2015-16 के दौरान स्वच्छ भारत मिशन के तहत देश में कुल 1.26 करोड़ शौचालयों का निर्माण हुआ था (प्रति सेकंड एक शौचालय से काफी कम)। इस गति से सबको शौचालयों का लक्ष्य साल 2022 में जाकर पूरा होगा। यानी 2019 की समय सीमा के तीन साल बाद! फिर भी स्वच्छता अभियान से जुड़े अधिकारियों का मानना है कि आमतौर पर आखिरी वक्त में ही निर्माण में तेजी आती है। सभी सरकारी स्कूलों में 15 अगस्त, 2015 तक शौचालय निर्माण के मामले में ऐसा ही हुआ था। सरकार 12 महीने के अंदर 2.61 लाख स्कूलों में 4.17 लाख शौचालय निर्माण का लक्ष्य पूरा करने में कामयाब रही। हालांकि, निर्माण में खामियों की खबरें भी आ रही हैं। बहुत सारे ऐसे शौचालयों का निर्माण हुआ है जिनका इस्तेमाल शायद ही कभी हो सकेगा।

स्वच्छता अभियान को लेकर प्रधानमंत्री मोदी के प्रयासों के मद्देनजर *डाउन टू अर्थ* ने प्रधानमंत्री के चुनाव क्षेत्र के साथ-साथ आठ राज्यों के मुख्यमंत्रियों, केंद्र सरकार के मंत्रियों और विपक्ष के प्रमुख नेताओं के चुनाव क्षेत्रों के जिलों पर भी नजर डाली। *(इन्फोग्रफिक्सः पेज नंबर 26-27)*

अनुमान है कि मोदी के चुनाव क्षेत्र वाराणसी में हर घर में शौचालय का लक्ष्य वर्ष 2048 में जाकर पूरा होगा। मतलब खुद प्रधानमंत्री द्वारा तय समय सीमा से 30 साल बाद!

हिमाचल प्रदेश के अलावा अन्य मुख्यमंत्रियों के चुनाव क्षेत्र भी यह लक्ष्य समय पर पूरा करने में नाकाम रहेंगे। केंद्र सरकार के जिन 20 मंत्रियों के चुनाव क्षेत्रों का मूल्यांकन किया गया है उनमें से 12 समय पर लक्ष्य पूरा नहीं कर सकेंगे।

हालांकि, कर्नाटक से आने वाले दो कैबिनेट मंत्रियों अनंत कुमार और डी.वी. सदानंद गौड़ा के संसदीय क्षेत्र यह लक्ष्य पहले ही हासिल कर चुके हैं, जबकि बाकी छह केंद्रीय मंत्रियों के क्षेत्र अपना लक्ष्य 2016 से 2019 के बीच पूरा कर लेंगे। शौचालय निर्माण का लक्ष्य पूरा करने में केंद्रीय कृषि मंत्री राधा मोहन सिंह का क्षेत्र सबसे अधिक समय लेने वाला है। मौजूदा रफ्तार से वहां यह लक्ष्य वर्ष 2090 में जाकर पूरा होगा।

दूर खिसकते लक्ष्य

अगर हम 2019 के लक्ष्य से चूक जाते हैं तो भारत चौथी बार इस महत्वपूर्ण विकास लक्ष्य को पाने में असफल रहेगा। देश में सबसे पहले 1986 में ग्रामीण स्वच्छता अभियान शुरू हुआ था। तब से आज तक चार बार यह लक्ष्य निर्धारित किया जा चुका है। हर घर में शौचालय बनवाने का संघर्ष बहुत पुराना है जिसके लिए अलग-अलग सरकारों ने अपनी मर्जी के मुताबिक नीतियां और कार्यक्रम बनाए।

मोदी सरकार के सत्ता में आने से पहले मनमोहन सिंह के नेतृत्व वाली यूपीए सरकार ने सभी घरों में शौचालय बनवाने के लिए 31 मार्च, 2012 का लक्ष्य रखा था। तत्कालीन सरकार में तो यहां तक चर्चा होने लगी थी कि शौचालय बनाने का काम पूरा होने के बाद शौचालय निर्माण के नाम पर चलने वाले सरकारी कार्यक्रमों का क्या होगा। लेकिन 2010 के आखिर तक स्पष्ट हो गया कि ऐसा होने वाला नहीं है। उस समय भी लक्ष्य हासिल करने के लिए देश को प्रति सेकंड एक शौचालय का निर्माण करना था। देश को बड़ी शर्मिंदगी तब उठानी पड़ी जब भारत संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (एमडीजी) से चूक गया। इसके तहत साल 2015 के आखिर तक आधी आबादी को शौचालय मुहैया कराने थे।

केंद्र सरकार की तरफ से देश का पहला स्वच्छता कार्यक्रम सन 1986 में शुरू आया था। इसका नाम था - केंद्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम (सीआरएसपी)। लेकिन इस कार्यक्रम में सामुदायिक भागीदारी न के बराबर थी। इसका जोर अनुदान के जरिये घरों में शौचालय निर्माण कराने पर था। सन 1993 में केंद्र सरकार ने सीआरएसपी के दिशानिर्देश की समीक्षा कर अनुदान की राशि बढ़ा दी। यह कदम शौचालय निर्माण की गति को बढ़ाने के लिए उठाया गया था। लेकिन 15 साल तक यह कार्यक्रम चलाए जाने के बावजूद हालात नहीं सुधरे। जनगणना के आंकड़ों के अनुसार, वर्ष 2001 में ग्रामीण इलाकों में शौचालयों का उपयोग बमुश्किल 22 प्रतिशत था। जबकि इस कार्यक्रम के तहत वर्ष 1990 से 1998 के बीच कुल 660 करोड़ रुपये खर्च हुए और 90 लाख से ज्यादा शौचालयों का निर्माण हुआ था।

इस कार्यक्रम की कमियों को भांपते हुए केंद्र सरकार ने वर्ष 1999 में संपूर्ण स्वछता अभियान (टीएससी) की शुरुआत की। इस अभियान के तहत वर्ष 2017 तक देश से खुले में शौच की प्रथा को मिटाने का लक्ष्य रखा गया। इस अभियान में स्थानीय समुदायों को भी अहमियत दी गई। साथ ही जागरुकता अभियान पर बल दिया जाने लगा। पहले के अभियान में ये कमियां थीं। फिर भी अभियान का जोर शौचालय निर्माण पर ही रहा। संपूर्ण स्वच्छता अभियान को मजबूती देने के लिए सरकार ने सन 2003 में 'निर्मल ग्राम पुरस्कार' की शुरुआत की। इसके तहत ऐसे गांव, ब्लॉक, जिले और राज्यों को

मेवात के पन्ना गांव निवासी वाहिदा खुले में शौच की वजह से फैल रही बीमारियों से परेशान हैं। उनका कहना है कि इसकी वजह से परिवार पर आर्थिक बोझ बढ़ गया है

कौन कितने पानी में?

हर घर शौचालय का वादा पूरा करने की दिशा में पिछले दो साल के दौरान हुई प्रगति के आधार पर *डाउन टू अर्थ* ने केंद्रीय मंत्रियों, राज्यों के मुख्यमंत्रियों और विपक्ष के नेताओं के चुनाव क्षेत्र वाले जिलों का मूल्यांकन किया। वहां यह लक्ष्य कब तक पूरा होगा, इसका अनुमान भी लगाया गया है। हैरानी की बात है कि खुद पीएम मोदी के चुनाव क्षेत्र में यह लक्ष्य 2019 के बजाय 2048 में जाकर पूरा होने की उम्मीद है।

मुख्यमंत्री

मनोहर लाल खट्टर: हरियाणा
चुनाव क्षेत्र : करनाल
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **4,288**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2019**

हरीश रावत : उत्तराखंड
चुनाव क्षेत्र : अल्मोड़ा
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **6,286**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2021**

वीरभद्र सिंह : हिमाचल प्रदेश
चुनाव क्षेत्र : शिमला ग्रामीण
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **4,392**
लक्ष्य पूरा : **2015**

अखिलेश यादव : उत्तर प्रदेश
चुनाव क्षेत्र : कन्नौज
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **8,309**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2082**

रघुबर दास : झारखंड
चुनाव क्षेत्र: पूर्वी जमशेदपुर
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **12,179**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2025**

नीतीश कुमार : बिहार
चुनाव क्षेत्र: नालंदा
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **15,348**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2051**

शिवराज सिंह चौहान: मध्य प्रदेश
चुनाव क्षेत्र : बुधनी
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **25,801**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2017**

रमन सिंह: छत्तीसगढ़
चुनाव क्षेत्र : राजनांदगांव
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **29,404**
कब पूरा होगा लक्ष्य: **2018**

कैबिनेट मंत्री

कलराज मिश्रा : लघु उद्योग मंत्रालय (सूक्ष्म, लघु तथा मझौले उद्योग)
चुनाव क्षेत्र : देवरिया
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **11,729**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2037**

चौधरी बीरेंदर सिंह: इस्पात मंत्री
चुनाव क्षेत्र : ऊंचा कला
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **6,444**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2019**

रामविलास पासवान : उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्री
चुनाव क्षेत्र : हाजीपुर
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **12,292**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2061**

जगत प्रसाद नड्डा: स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री
चुनाव क्षेत्र : बिलासपुर
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **4,809**
लक्ष्य पूरा : **2016**

उमा भारती: जल संसाधन, नदी विकास तथा गंगा पुनरूद्धार मंत्री
चुनाव क्षेत्र : झांसी
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **7,867**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2029**

सुरेश प्रभु: रेल मंत्री
चुनाव क्षेत्र : राजापुर
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **42,899**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2017**

डी वी सदानंद गौड़ा: सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्री
चुनाव क्षेत्र : बंगलोर (उत्तर)
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **5,313**
लक्ष्य पूरा : **2015**

मनोहर पर्रिकर: रक्षा मंत्री
चुनाव क्षेत्र : पणजी
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **17,981**
कब पूरा होगा लक्ष्य: **2017**

नितिन गडकरी: जहाजरानी, भूतल परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री
चुनाव क्षेत्र : नागपुर
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **24,931**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2018**

राधा मोहन सिंह: कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री
चुनाव क्षेत्र : पूर्वी चंपारन
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **11,162**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2090**

सुषमा स्वराज : विदेश मंत्री
चुनाव क्षेत्र : विदिशा
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **13,391**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2024**

राजनाथ सिंह : गृह मंत्री
चुनाव क्षेत्र : लखनऊ
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **5,332**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2051**

नरेंद्र मोदी : प्रधानमंत्री, परमाणु ऊर्जा विभाग, अंतरिक्ष विभाग, कार्मिक लोक शिकायत एवं पेंशन विभाग
चुनाव क्षेत्र : वाराणसी
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **7,327**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2048**

जुआल ओरम: जनजातीय मामलों के मंत्री
चुनाव क्षेत्र : सुंदरगढ़
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **73,756**
कब पूरा होगा लक्ष्य: **2018**

नरेंद्र सिंह तोमर: ग्रामीण विकास, पंचायती राज, पेयजल एवं स्वच्छता मंत्री
चुनाव क्षेत्र : ग्वालियर
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **12,754**
कब पूरा होगा लक्ष्य: **2022**

हरसिमरत कौर बादल: खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्री
चुनाव क्षेत्र : भटिंडा
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **3,851**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2019**

अनंत गीते: भारी उद्योग तथा सार्वजनिक उद्यमिता मंत्री
चुनाव क्षेत्र : रायगढ़
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **16,265**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2023**

अशोक गजपति राजू पशुपति: नागरिक उड्डयन मंत्री
चुनाव क्षेत्र : विजीयनगरम
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **17,173**
कब पूरा होगा लक्ष्य: **2036**

अनंत कुमार: उर्वरक एवं रसायन मंत्री, संसदीय मामलों के मंत्री
चुनाव क्षेत्र : बंगलोर (दक्षिण)
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **5,313**
लक्ष्य पूरा : **2015**

मेनका संजय गांधी: महिला एवं बाल विकास मंत्री
चुनाव क्षेत्र : पीलीभीत
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **5,676**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2044**

विपक्ष के नेता

सोनिया गांधी : सांसद और यूपीए अध्यक्ष
चुनाव क्षेत्र : रायबरेली
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **6,581**
कब पूरा होगा लक्ष्य : **2060**

राहुल गांधी : सांसद और कांग्रेस नेता
चुनाव क्षेत्र : अमेठी
2015-16 में निर्मित शौचालयों की संख्या : **7,683**
कब पूरा होगा लक्ष्य: **2043**

स्रोत : पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय से प्राप्त 15 अगस्त, 2016 तक के आंकड़ों के आधार पर डाउन टू अर्थ द्वारा लगाए गए अनुमान। आंकड़े चुनाव क्षेत्रों से संबंधित जिलों के अनुसार

ग्राफिक : राज कुमार सिंह

कैसे लगाया अनुमान

देश को खुले में शौच से मुक्ति दिलाने के लिए जरूरी शौचालय निर्माण का लक्ष्य 2019 तक पूरा नहीं होने का अनुमान इस प्रकार लगाया

राष्ट्रीय स्तर : शौचालयों की संख्या जिनका अभी घरों में निर्माण होना बाकी है :
82395267 = 823 लाख

अत : इस संख्या को आने वाले **36 महीनों** में पूरा किया जाना है (लक्ष्य वर्ष, अक्टूबर 02 , 2019)

लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जितने शौचालयों का निर्माण प्रतिमाह किया जाना चाहिए =
(823 लाख/36) = 23 लाख

लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जितने शौचालयों का निर्माण प्रतिदिन किया जाना चाहिए =
(23 लाख/30) = 0.8 लाख
(1 महीने में 30 दिन)

लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जितने शौचालयों का निर्माण प्रति घंटे किया जाना चाहिए =
(0.8 लाख/24) = 3333 (1 दिन में 24 घंटे)

लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जितने शौचालयों का निर्माण प्रति मिनट किया जाना चाहिए =
(3333/60) = 56 (1 घंटे में 60 मिनट)

लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जितने शौचालयों का निर्माण प्रति सेकंड किया जाना चाहिए = **1** (संख्या को निकटतम दशमलव के हिसाब से माना गया है)

वित्त वर्ष 2014 -15 में बनाए गए शौचालयों की संख्या=
127 लाख (वर्तमान दर = शौचालय/ वर्ष)

इस गति से शेष बचे **823 लाख शौचालयों के निर्माण** कार्य पूरा होने **में छह साल और लगेंगे**

अत : मौजूदा गति से **लक्ष्य 2019 के बजाय 2022 में जाकर पूरा होगा**

पुरस्कृत किया जाता था जो खुले में शौच की प्रथा को समाप्त कर चुके हैं।

शुरू में 'निर्मल ग्राम पुरस्कार' काफी चर्चित हुए। लेकिन कई ग्राम पंचायतें पुरस्कार पाने के बाद लापरवाह हो गईं और वहां लोग दोबारा खुले में शौच के लिए जाने लगे। पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय द्वारा वर्ष 2014 में प्रकाशित राष्ट्र स्तरीय निगरानी रिपोर्ट के अुनसार, निर्मल ग्राम पुरस्कार पाने वाले 30 फीसदी गांव फिर से खुले में शौच की तरफ लौटने लगे हैं।

वर्ष 2012 में भारत के स्वच्छता कार्यक्रम में एक और परिवर्तन हुआ। 'संपूर्ण स्वच्छता अभियान' की जगह 'निर्मल भारत अभियान' ने ले ली। लेकिन उद्देश्य वही रहा। इस बार नई समय-सीमा तय हुई। सन 2022 तक भारत को एक 'स्वच्छ' देश बनना था, जहां सबको शौचालय की सुविधा मुहैया हो सके। पीएम मोदी ने 'निर्मल भारत अभियान' का नाम बदलकर 'स्वच्छ भारत मिशन' रख दिया है। लेकिन इस कार्यक्रम का उद्देश्य सिर्फ शौचालयों का निर्माण कराना ही नहीं है, बल्कि इसका जोर स्वच्छता सुनिश्चित करने में मददगार नई तकनीक और लोगों की भागीदारी से सूखे व गीले कूड़े के प्रबंधन पर भी है।

हालांकि, पिछले पंद्रह वर्षों के दौरान शौचालय बनवाने में अच्छी खासी सफलता मिली है। लेकिन बार-बार लक्ष्य से चूक जाना ऐसे कार्यक्रम पर होने वाली भारी सरकारी खर्च पर सवाल खड़े करता है। वर्ष 2000 से 2015 के बीच केंद्र सरकार ने स्वच्छता कार्यक्रमों पर कुल 33,553 करोड़ रुपये खर्च किये हैं। पिछले एक साल में सरकार 2 हजार करोड़ रुपये से ज्यादा खर्च कर चुकी है।

खुले में शौच, बीमारी को न्यौता

आइए वापस मेवात चलते हैं। पन्ना गांव की 40 वर्षीय वहीदा रोज शौच के लिए बाहर खेत में जाती हैं। यह एक दुष्चक्र है। शौच के लिए बाहर जाना गंदगी से जुड़ी बीमारियों को जन्म देता है और फिर इलाज में खर्च की वजह से शौचालय बनवाने के लिए पैसा नहीं बचता। खुले में शौच के लिए जगह खोजना भी मुश्किल काम है। बहुत दूर जाना सुरक्षित नहीं होता। वहीदा की तरह ही गांव के करीब 150 लोग खुले में शौच जाते हैं। गांव में ऐसी एक भी खुली जगह नहीं दिखती जहां मल न पड़ा हो। स्वास्थ्य पर इसका असर भी दिखने लगा है। वहीदा के परिवार की मासिक आय करीब 8,000 रुपये है जबकि इलाज का खर्च 1,000 रुपये के करीब आता है। इस दबाव में वह अपने बच्चों को गांव के झोलाछाप डॉक्टर के पास ले जाने लगी हैं जो कम खर्चीला है। वहीदा का कहना है, "कुछ भी कर लीजिए, डॉक्टर के पास तो जाना ही पड़ेगा। और इस सब का कारण खुले में शौच और उससे होने वाली बीमारियां हैं।"

अनुमान है कि देश में रोजाना करीब एक लाख टन मानव मल खुले में निकलता है जो जल स्रोतों को प्रदूषित कर देता है। यूनिसेफ के अनुसार, "एक ग्राम मल में करीब एक करोड़ विषाणु, दस लाख जीवाणु, एक हजार पैरासाइट सिस्ट (परजीवी पुटी) और 100 परजीवी अंडे पाये जा सकते हैं।" पेयजल एवं स्वच्छता विभाग के एक अनुमान के मुताबिक, देश का करीब 75 प्रतिशत भूजल मानव मल, कृषि व उद्योगों से निकले कूड़े-कचरे की वजह से प्रदूषित हो जाता है।

हाल ही में आई एक वैज्ञानिक रिपोर्ट से पता चलता है कि भारत में अत्यधिक कुपोषण का कारण स्वच्छता की कमी हो सकती है। कुपोषण भी एक बड़ी समस्या है जिससे देश जूझ रहा है। ग्रामीण इलाकों और शहरी झुग्गियों में रहने वाले ज्यादातर बच्चे आसपास के लोगों के मल से निकलने वाले जीवाणुओं के संपर्क में आते हैं। इससे उनमें पेट संबंधी गंभीर बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है जो शरीर को भोजन से मिलने वाली पौष्टिकता से वंचित कर देती हैं। इससे बच्चे कुपोषित हो जाते हैं। भारत और अफ्रीका में स्वच्छता पर काम करने वाले गैर-सरकारी संगठन 'ग्राम विकास' से जुड़े जोसेफ मेडिअथ का कहना है, "भारत में पहले से अधिक भोजन उपलब्ध होने के बावजूद बच्चों में कुपोषण बढ़ा है। इसकी वजह स्वच्छता और साफ पेयजल की कमी है।"

हालांकि, नई दिल्ली स्थित सेंट्रल पब्लिक हेल्थ इंजीनियरिंग आर्गेनाईजेशन में उप-सलाहकार जे.बी. रविंदर का कहना कुछ अलग है। वह कहते हैं कि दस्त जैसी पानी से जुड़ी बीमारियों और स्वच्छता की कमी में सीधा संबंध स्थापित करना मुश्किल है। क्योंकि सरकार इसकी निगरानी ही नहीं करती है।

राजस्थान का धौलपुर देश के उन 100 जिलों में आता है जहां बच्चों में सबसे अधिक कुपोषण है। यहां स्वच्छता की कमी और कुपोषण में सीधा संबंध दिखाई पड़ता है। यहां बड़ी तादाद में आंगनबाड़ी केंद्र होने के बावजूद बच्चों में कुपोषण कम नहीं हुआ है। स्वच्छता की कमी को इसकी वजह बताया जाता है। जिले की करीब 80 प्रतिशत आबादी खुले में शौच करती है। सखवाड़ा गांव के बीच से एक खुला नाला गुजरता है जिसमें मल बहता है। आंगनबाड़ी जाने के लिए बच्चे और गर्भवती महिलाएं इसी नाले को पार करते हैं। गांव की एक बुजुर्ग महिला भानुमती पीटाका कहती हैं कि डायरिया और निमोनिया हमेशा से हमारे जीवन का हिस्सा रहा है। हर साल मानसून में यहां पांच-छह बच्चे बीमार पड़ते ही हैं। वह बताती हैं कि इस गांव के बच्चे हमेशा से पतले-दुबले रहे हैं।

भारत सरकार ने वर्ष 2015-16 में राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एनएफएचएस-4) कराया था। इसके नतीजों की मदद से स्वच्छता और पांच साल तक के बच्चों में दस्त के मामलों के बीच संबंध स्थापित किया जा सकता है। वर्ष 2005-06 (एनएफएचएस-3) और 2015-16 (एनएफएचएस-4) के बीच, यानी 10 वर्षों के दौरान घरों में स्वच्छता की स्थिति में काफी सुधार आया है। साथ ही पांच साल तक के बच्चों के स्वास्थ्य में भी सुधार हुआ है। खासतौर पर दस्त के मामले में। मेघालय और उत्तराखंड जैसे पर्वतीय राज्यों के अलावा सभी राज्यों में यही देखने में आया है। पिछले 10 वर्षों में स्वच्छता और पेयजल की स्थिति बेहतर होने के बावजूद इन राज्यों में 5 साल तक के बच्चों में सांस संबंधी गंभीर बीमारियां तेजी से बढ़ी हैं। इसका मतलब है कि बिगड़ते पर्यावरण का बुरा असर भी बच्चों पर पड़ रहा है, जिसका संबंध स्वच्छता से नहीं भी हो सकता है। इसका कारण मातृत्व संबंधी जागरूकता में कमी, परिवार में पांच साल से कम आयु के दूसरे भाई-बहन की मौजूदगी, जन्म के समय वजन कम होना और स्तनपान या पोषण की कमी हो सकता है।

स्वच्छता की कमी बच्चों के विकास पर असर डालती है। प्रतिष्ठित मेडिकल जर्नल 'प्लोस मेडिसिन' में प्रकाशित एक अध्ययन में मध्य प्रदेश के ग्रामीण इलाकों में बच्चों के स्वास्थ्य पर संपूर्ण स्वच्छता अभियान के असर का मूल्यांकन किया गया है। इसके लिए राज्य के 80 गांव से पांच साल से कम उम्र के पांच हजार बच्चों को शामिल किया गया था। संपूर्ण स्वच्छता अभियान से पहले और बाद के आंकड़े बताते हैं कि इन गांवों में शौचालयों की सुविधा 19 फीसदी बढ़ी लेकिन बच्चों की सेहत, खासकर पेट संबंधी बीमारियों में इतना सुधार नहीं हुआ। शोधार्थियों ने पाया कि बच्चों के स्वास्थ्य के मामले में आसपास के वातावरण से जुड़े कारक जैसे साफ पेयजल और शौचालय भी निर्णायक होते हैं।

इन शोधकर्ताओं ने हाल ही में प्रकाशित भारत के 112 ग्रामीण जिलों में कुपोषण और खुले में शौच के स्तर के आंकड़ों का विश्लेषण किया। ये 112 जिले भारत में कुपोषण से सबसे अधिक प्रभावित थे। उन्होंने पाया कि खुले में शौच के मामलों में 10 फीसदी की वृद्धि से कुपोषण में भी 0.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

कोलकाता स्थित आल इंडिया इंस्टीट्यूट ऑफ हाईजीन एंड पब्लिक हेल्थ में प्रोफेसर मधुमिता दोबे कहती हैं, "देश में व्याप्त अत्यधिक कुपोषण को दूर करने के लिए स्वच्छता में सुधार सबसे बेहतर उपाय है।" कुपोषण के मामले में अफ्रीका के कई देश भारत से बेहतर हैं। जोसेफ का कहना है कि भारत और अफ्रीकी देशों में स्वच्छता से जुड़े तौर-तरीकों में अंतर के जरिये इनके बीच कुपोषण दर के अंतर को समझा जा सकता है।

इस बात के प्रमाण हैं कि सरकार ने जहां भी स्वच्छता से जुड़े कार्यक्रम प्रभावी ढंग से लागू किये वहां कुपोषण में कमी आई है। महाराष्ट्र का अहमदनगर इसका उदहारण है। सन 2004 में सरकार ने अहमदनगर जिले के 60 गांवों में से आधे गांवों में संपूर्ण स्वच्छता अभियान का सफल क्रियान्वयन किया था। इसके बाद इन गांवों में खुले में शौच जाना बंद हो गया। लंदन स्कूल ऑफ हाईजीन में प्रोफेसर रहे डीन स्पीयर्स अपने सहयोगी अर्थशास्त्री जेफ हैमर के साथ इन गांवों के बच्चों के स्वास्थ्य पर नजर रखे हुए थे। उन्होंने पाया कि इन गांवों के बच्चों की औसत लंबाई स्वच्छता अभियान से वंचित आसपास के 30 गांवों के बच्चों के मुकाबले एक सेंटीमीटर बढ़ गई है।

उम्मीद फिर भी कायम

अगर शौचालय का होना मानव विकास के लिए इतना महत्वपूर्ण है, तो भारत अपने स्वच्छता कार्यक्रमों को लेकर इतना ढुलमुल क्यों है? अतीत भले ही निराशाजनक रहा हो, लेकिन आज भारत में ऐसे तमाम उदाहरण हैं जो दर्शाते हैं कि विभिन्न समुदायों और सरकारी व गैर-सरकारी संगठनों ने स्वच्छता अभियानों को सफलतापूर्वक लागू किया है। हमें ऐसे उदाहरणों पर गौर करना चाहिए।

अब वापस गंजाम चलते हैं। तमाना गांव में रोजाना आने वाले तकरीबन 50 लोगों के लिए यह हैरानी की बात है कि गांव का कोई भी व्यक्ति शौचालय की बात नहीं करता। जबकि यहां आने वाले सभी लोग शौचालय से जुड़े प्रयोग ही देखने आते हैं। ये प्रयोग दो दशक से कायम हैं। बात छेड़ने पर गांव के लोग दो दशक में हुई कृषि उत्पाद में बढ़ोत्तरी की बात करने लगते हैं। कुछ देर की बातचीत में ही पता चल जाता है कि गांव की खुशहाली का रास्ता शौचालयों से होकर गुजर रहा है। 'ग्राम विकास' द्वारा शुरू की गई इसी पहल से देश को सीख लेने की जरूरत है कि कैसे स्वच्छता

शौचालय और डायरिया के बीच संबंध

पांच साल से कम आयु के बच्चों में डायरिया के मामलों में कमी और नए शौचालयों का उपयोग करने वाले परिवारों के बीच संबंध को इस ग्राफ के जरिये समझा जा सकता है।

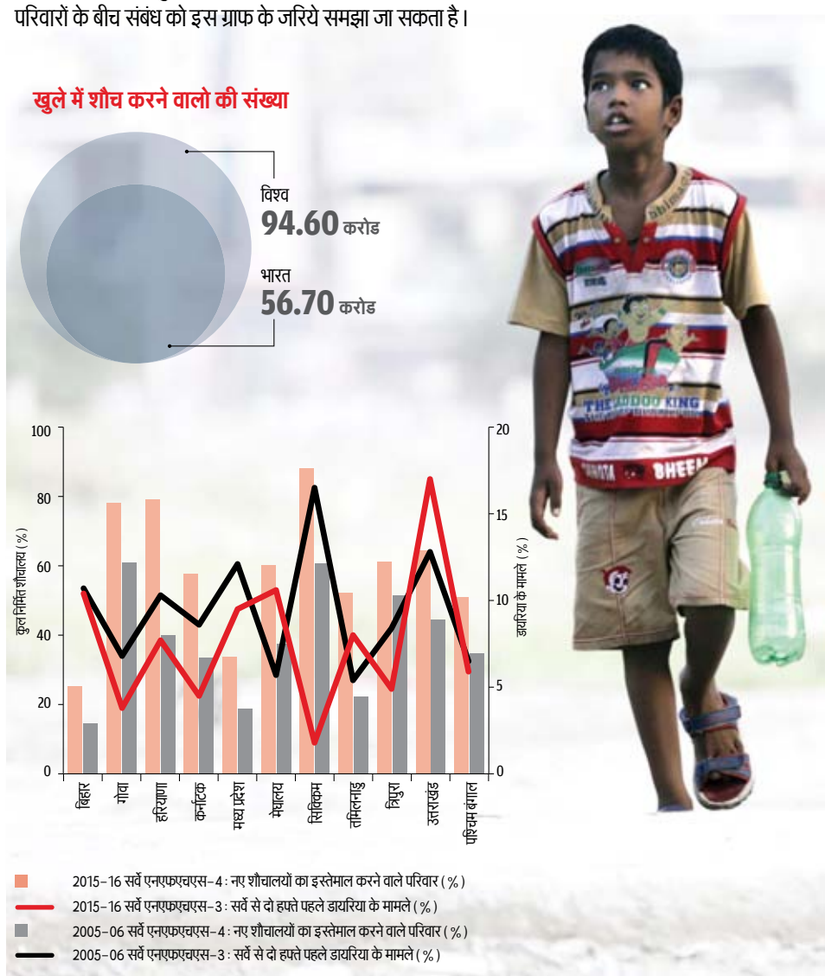

रश्मि वर्मा / सीएसई

पश्चिम बंगाल के बरासात-1 ब्लॉक में स्वच्छता के प्रति लोगों की सोच में बदलाव के लिए चलाए जा रहे जागरूकता अभियान की एक झलक

को गांव के विकास की धुरी बनाया जाये।

तीन बेटियों की मां 26 वर्षीय चंचला जानी कहती हैं, "चौदह साल पहले बने शौचालय ने हमारा जीवन बदल दिया। मेरी बेटियां शौच या पानी लाने के लिए अब घर से बाहर नहीं जाती हैं। शौचालय की वजह से ही मैं खुशहाल हूं।" इस जिले में 'ग्राम विकास' तकरीबन दो दशक से स्वच्छता पर काम कर रहा है और स्वच्छता को सिर्फ शौचालय निर्माण की गतिविधियों तक सीमित नहीं रखता है। बल्कि शौचालय को केंद्र में रखकर गांव के संपूर्ण विकास के लिए स्थानीय लोगों के साथ मिलकर काम करता है।

लेकिन इस अभियान की राह आसान नहीं थी। स्थानीय समुदाय की भागीदारी और स्थायी तौर पर शौचालय का इस्तेमाल सुनिश्चित करने के लिए 'ग्राम विकास' को दोहरी रणनीति अपनानी पड़ी। सबसे पहले ग्रामीणों को स्वच्छता अभियान की बागडोर अपने हाथ में लेने के लिए प्रोत्साहित किया गया। इसके लिए पूरी प्रतिबद्धता दिखानी जरूरी है। यानी जब तक गांव का प्रत्येक परिवार शौचालय बनवाने और ग्राम स्तरीय समिति बनाने के लिए सहमत नहीं होता, तब तक स्वच्छता का काम शुरू नहीं होता है। दूसरा, गांव में शौचालय से पहले जलापूर्ति का इंतजाम किया जाता है। गांव के प्रत्येक घर में नल के तीन कनेक्शन मिलते हैं। एक शौच के लिए, दूसरा नहाने के लिए और तीसरा अन्य घरेलू कामों के लिए। जोसेफ बताते हैं कि स्वच्छता सुनिश्चित करने के लिए उनका मुख्य काम पानी की व्यवस्था करना है।

गांव की कार्यकारी समिति की अध्यक्ष बोनोमाली मलिका कहती हैं, "हम अपने गांव की टंकी (ओवरहेड टैंक) में काफी पानी जमा कर लेते हैं जो हमारी जरूरत से ज्यादा होता है। इससे घरों के पीछे सब्जियां उगाने में मदद मिलती है। हमारी आमदनी दोगुनी हो गई है।" अब यह काम एक बड़े अभियान का रूप ले चुका है जिसे 'मूवमेंट एंड एक्शन नेटवर्क फॉर ट्रांसफॉर्मेशन इन रूरल एरियाज' (मंत्रा) नाम दिया गया है। यह अभियान 200 गांव में चल रहा है। इसमें गांव के संपूर्ण विकास के लिए पानी और स्वच्छता को केंद्र बिंदु माना जाता है। यह पांच मुख्य सिद्धांतों पर आधारित है। ये सिद्धांत हैं - सब लोगों को अभियान में शामिल करना, महिला और पुरुष को बराबरी का दर्जा देना, सामाजिक बराबरी, लागत का आपस में बंटवारा और टिकाऊ काम। लोग शौचालय और स्नानघर बनाने की लागत का 60 प्रतिशत और जलापूर्ति के इंतजाम का 30 प्रतिशत तक खर्च उठाते हैं। बाकी का योगदान 'ग्राम विकास' कर देता है। नेशनल ब्यूरो ऑफ इकनॉमिक रिसर्च द्वारा 2015 में प्रकाशित एक वर्किंग पेपर के अनुसार, जिन 96 गांवों में 'ग्राम विकास' काम करता है वहां दस्त और मलेरिया के मामलों में 30 से 50 प्रतिशत की कमी आई है।

'ग्राम विकास' दो दशक से स्वच्छता पर काम कर रहा है। इसके द्वारा चलाए जा रहे 'मंत्रा' अभियान में गांव के संपूर्ण विकास के लिए पानी और स्वच्छता को केंद्र बिंदु माना गया है

दरअसल, स्वच्छता अभियानों की एक बड़ी समस्या को 'ग्राम विकास' के प्रयोग ने हल कर दिया है। सेंटर फॉर साइंस एंड एन्वायरॉन्मेंट (सीएसई) के एक विश्लेषण के अनुसार, पंचायतों को पूरे अधिकार, फंड और कर्मचारी नहीं मिलना स्वच्छता अभियान की नाकामी की प्रमुख वजह है जबकि

'दुनिया के गरीब देशों से हमें क्या सीखना चाहिए?'

सिर्फ बड़ी तादाद में शौचालयों के निर्माण से देश का स्वच्छता संकट दूर होने वाला नहीं है। अफ्रीकी देशों के अनुभव बताते हैं कि सम्पूर्ण स्वच्छता कार्यक्रमों को जमीनी स्तर पर समुदाय केंद्रित बनाने की जरूरत है

कमल कार

अध्यक्ष, सीएलटीएस फाउंडेशन, कोलकाता। सर्फांति सेनिटेशन लाइफटाइम अचीवमेंट पुरस्कार प्राप्त।

भारत का स्वच्छता संकट एक वैश्विक चिंता बनकर उभरा है। खुले में शौच के लिए जाने वाले लोगों की तादाद में कमी की रफ्तार बेहद धीमी है जबकि स्वच्छता पर देश का खर्च तीन दशक में दस गुना बढ़ा है। भारत विकासशील देशों में स्वच्छता पर सर्वाधिक बजट खर्च करने वाला देश है। फिर भी खुले में शौच जाने वालों की संख्या यहां सबसे ज्यादा है।

वर्ष 2000 से सामने आए 'समुदाय आधारित संपूर्ण स्वच्छता' के दृष्टिकोण ने स्वच्छता कार्यक्रमों को देखने का हमारा नजरिया बदल डाला। लोगों के व्यवहार में बदलाव के लिए स्थानीय समुदाय की भागीदारी के महत्व को दुनिया समझ चुकी है। बुनियादी ढांचे के इस्तेमाल में सुधार के जरिये लोगों के स्वास्थ्य की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए भी स्थानीय समुदाय की भागीदारी आवश्यक है। 'समुदाय आधारित संपूर्ण स्वच्छता' का दृष्टिकोण एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के 70 से अधिक देशों में फैल चुका है। आज साढ़े चार करोड़ से अधिक लोग खुले में शौच से मुक्त वातावरण में रहते हैं।

भारत के पड़ोसी देशों सहित 40 से अधिक देश अपनी राष्ट्रीय स्वच्छता नीति को बदल चुके हैं। शौचालय निर्माण के लिए सीधे अनुदान के बजाय अब समुदाय के सशक्तिकरण पर जोर दिया जा रहा है। इसी की बदौलत बांग्लादेश खुले में शौच की आदत को पूरी तरह समाप्त कर 99 प्रतिशत लोगों को शौचालय मुहैया करा चुका है। जबकि सन 1999 में वहां महज 35 फीसदी लोग शौचालय का इस्तेमाल करते थे। नेपाल ने कई जिलों में स्थानीय सशक्तिकरण का तरीका सफलतापूर्वक लागू करने के कुछ वर्षों बाद कोई भी अनुदान न देने की नीति अपनाई है।

दुर्भाग्यवश भारत में स्वच्छता कार्यक्रमों के क्रियान्वयन की जिम्मेदारी ग्रामीण विकास मंत्रालय के अधीन जल एवं स्वच्छता विभाग के पास है न कि स्वास्थ्य मंत्रालय के पास, जिसका मुख्य काम सार्वजनिक स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार लाना है। ग्रामीण विकास मंत्रालय का ज्यादा जोर ढांचागत सुविधाओं के निर्माण पर रहता है। यह पता लगाना बेहद मुश्किल है कि स्वच्छता पर हुए खर्च का किसी जिले या राज्य में क्या असर पड़ा है।

हालांकि 'स्वच्छ भारत मिशन' के तहत भारत सरकार की नई स्वच्छता नीति में राज्य सरकारों को अपनी नीति व दृष्टिकोण अपनाने की आजादी दी गई है। फिर भी स्वच्छता के मामले हुई प्रगति का मूल्यांकन शौचालयों के निर्माण और खर्च धनराशि के आधार पर होता है। दुर्भाग्यवश 'स्वच्छ भारत मिशन' की तरह 'व्यवहार परिवर्तन' के लिए आवंटित राशि को घटाकर आठ फीसदी कर दिया गया है जबकि 'निर्मल भारत अभियान' के तहत यह राशि 15 प्रतिशत थी। विडंबना है कि अब भी लोगों की सोच में परिवर्तन के बजाय बुनियादी ढांचे के निर्माण पर ही अधिक जोर दिया जा रहा है। जबकि हम अच्छी तरह जान चुके हैं कि स्वास्थ्य के मामले में सुधार के लिए सामूहिक व्यवहार या लोगों की सोच में परिवर्तन लाना सबसे ज्यादा जरूरी है।

मेरे कुछ सुझाव हैं जिन पर देश के सर्वोच्च राजनीतिक नेतृत्व को ध्यान देना चाहिए और साथ ही दूसरे नए विचारों को भी शामिल किया जाना चाहिए।

- नीतियों में आवश्यक बदलाव हों जिससे लोगों के अधिकार सुनिश्चित करने का माहौल बने। ऐसी नीतियां अपनाई जाएं जो सही मायने में विकेंद्रित हों, समुदाय को नेतृत्व दें और झूठी बाहरी उम्मीदों पर आधारित न हो।
- स्थानीय लोगों को कार्यक्रम तैयार करने और उसके कार्यान्वयन की जिम्मेदारी देनी चाहिए।
- स्वच्छता कार्यक्रमों को 'संपूर्ण स्वच्छता' जैसे नाम देने से पहले स्थानीय सशक्तिकरण और इसकी शर्तों को सही मायनों में समझने की जरूरत है। जब तक बाहर के लोग कार्यक्रम थोपते रहेंगे, तब तक स्थानीय स्तर पर समुदाय का सशक्तिकरण नहीं हो सकता। जब तक सिर्फ फंड के बूते बदलाव लाने की कोशिश की जाएगी, ध्यान समुदाय के बजाय कहीं और भटक जाएगा।
- स्वच्छता के मामले में प्रगति के मूल्यांकन के पैमानों को बदलने की बहुत जरूरत है। ये पैमाने परिणाम केंद्रित होने चाहिए।
- विकेंद्रित दृष्टिकोण को बढ़ावा दिया जाए। साथ ही स्वाभाविक नेतृत्व और सामुदायिक परामर्शदाताओं को शामिल कर विविधता सुनिश्चित करनी चाहिए।
- राज्य सरकारों को सशक्त बनाने और मुख्यमंत्रियों व अन्य प्रमुख राजनैतिक नेतृत्व को प्रोत्साहित करने की जरूरत है कि वह अपने पड़ोसी राज्यों और देशों से सीख लें। खासकर उनसे जिन्होंने इस क्षेत्र में सफलता पाई है। उदाहरण के तौर, स्वच्छता के मामले में हिमाचल प्रदेश से सीख लेनी चाहिए।
- शौचालय के बारे में बात करने से पहले हमें यह सोचना होगा कि लोगों के व्यवहार में बदलाव कैसे लाया जा सकता है? सामूहिक व्यवहार में परिवर्तन किसी भी सफल और टिकाऊ स्वच्छता कार्यक्रम का संवाहक है।
- और अंत में, क्या स्वच्छता पर एक खुला और स्पष्ट राष्ट्रीय विमर्श हो सकता है जिसमें एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के कम से कम 20 गरीब देशों से नेताओं को बुलाया जाए? ये हमें समुदाय के नेतृत्व में स्वच्छता को बढ़ावा देने के बारे में अपने अनुभव बता सकते हैं।

ऐसी कोई वजह नहीं है कि भारत अपने लाखों लोगों को सशक्त करते हुए शौचालय के इस्तेमाल में तेजी नहीं ला सकता। हमसे कम संसाधनों वाले कई देश ऐसा कर चुके हैं। अगर हमारे पास राजनैतिक इच्छाशक्ति हो तो इस लक्ष्य को बहुत कम समय में पूरा किया जा सकता है।

रश्मि वर्मा / सीएसई

उड़ीसा के गंजाम जिले के एक गांव में सामुदायिक भागीदारी से बना एक शौचालय और बाथरूम

संविधान के अनुसार पंचायतों को ये जिम्मेदारियां और फंड मिलना चाहिए।

स्थानीय जरूरतों के हिसाब से नीति न बनाना दूसरी समस्या है। उदहारण के लिए राजस्थान के चुरू जिले को ही लें। यह जिला लंबे समय तक खुले में शौच की समस्या से जूझता रहा है। सन 2011 की जनगणना के अनुसार, ग्रामीण राजस्थान के 80 प्रतिशत घरों में शौचालय नहीं हैं। राज्य में स्वच्छता की स्थिति निराशाजनक है, वहीं चुरू पहला ऐसा जिला बना जहां खुले में शौच एकदम खत्म हुआ। चुरू की सफलता से उम्मीदें बढ़ती हैं।

सवाल यह है कि चुरू ऐसा करने में कैसे सफल हो पाया? स्थानीय प्रशासन ने सन 2012 में एक अभियान शुरू किया था जिसमें स्थानीय लोगों की भागीदारी सुनिश्चित की गई। चुरू की तत्कालीन जिलाधिकारी अर्चना सिंह बताती हैं, "जिले में स्वच्छता के हालात बदलने के लिए 'चोखो चुरू' या 'क्लीन चुरू' के नारे के साथ एक व्यापक जागरूकता अभियान चलाया गया था।" इस अभियान का असर तीन साल बाद देखने को मिला। अब जिले के लगभग हर घर में शौचालय है और लोग कहते हैं कि खुले में शौच करने के बारे में कोई सोच भी नहीं सकता।

चुरू में हुई इस पहल में पानी की कमी का ध्यान रखा गया। लोग इस वजह से भी शौचालय का इस्तेमाल नहीं करते थे। जयपुर के इंस्टीट्यूट ऑफ हेल्थ मैनेजमेंट रिसर्च में प्रोफेसर गौतम साधू बताते हैं, "चुरू में सिर्फ शौचालय की समस्या नहीं थी, बल्कि यह क्षेत्र भूतल और भूगर्भ जल के खारेपन से भी जूझ रहा था।" शौचालयों को बढ़ावा देने में

> *"स्वच्छता के हालात सुधारने के लिए 'चोखो चुरू' या 'क्लीन चुरू' के नारे के साथ एक व्यापक जागरूकता अभियान चलाया गया था। अब जिले के लगभग हर घर में शौचालय है"*

यह पहली चुनौती थी, क्योंकि लोग साफ पानी का इस्तेमाल शौचालय में नहीं करना चाहते थे। गैर-सरकारी संगठनों और स्थानीय लोगों से बात करने के बाद जिला प्रशासन को समझ आया कि खारे पानी का इस्तेमाल शौचालय में किया जा सकता है।

पैसे की कमी भी शौचालय बनवाने में बड़ी बाधा मानी जाती है। इसलिए तमिलनाडु के तिरुचिरापल्ली स्थित एक गैर-सरकारी संगठन 'ग्रामालय' ने शौचालय निर्माण के लिए माइक्रो-फाइनेंसिंग की व्यवस्था शुरू की है। अन्य गैर-सरकारी संगठन जैसे नई दिल्ली स्थित सुलभ इंटरनेशनल सोशल सर्विस आर्गेनाईजेशन कई ग्रामीण इलाकों में सस्ते शौचालय मुहैया कराते हैं। इसकी लागत सरकारी अनुदान से कम ही है।

साल 2019 में भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के सामने दो बड़ी चुनतियां होंगी। लोकसभा चुनाव जीतना और सबको शौचालय के वादे को पूरा करना। लोकसभा का चुनाव मई महीने में होना तय है। अगर मोदी 2014 की सफलता को दोहराते हैं तो यह इतिहास रचने जैसा होगा। लेकिन उसके चार महीने बाद अगर प्रधानमंत्री मोदी हर घर शौचालय के अपने वादे को पूरा करने में कामयाब हो जाते हैं, तो देश को 'दूसरी आजादी' दिलाने का श्रेय उन्हें मिल सकता है।

'सिर्फ शौचालयों की संख्या बढ़ना काफी नहीं'

भारत को खुले में शौच की आदत से मुक्त कराने के लिए चार पहलुओं पर ध्यान देने की जरूरत

आंद्रेस हुर्रसो

'वाटर एड, यूके' से जुड़े नीति विश्लेषक

छह वर्ष पूर्व मैंने ग्रामीण स्वच्छता पर एक शोध की शुरुआत की थी। जहां तक मुझे याद है ज्यादातर सरकारी कर्मचारियों और पंचायत नेताओं ने इस विषय में कोई खास दिलचस्पी नहीं दिखाई। उस समय स्वच्छता अभियान प्राथमिकता में नहीं था और इसका काम काफी धीमी गति से चल रहा था। उस अनुभव ने ग्रामीण स्वच्छता को देखने के मेरे नजरिये को और भी रोमांचक बना दिया। 'स्वच्छ भारत अभियान' ने स्वच्छता को भारत के सर्वोच्च राजनैतिक एजेंडे के तौर पर स्थापित कर दिया है। इस समय यह देश के प्रधानमंत्री से लेकर जिलाधिकारियों और दूरदराज के ग्रामीण क्षत्रों में बसे जमीनी कार्यकर्ताओं तक में चर्चा का विषय बना हुआ है। साल 2014 में अभियान की शुरुआत से अब तक के आंकड़ों से शौचालय निर्माण की तेज गति का पता चलता है। ताजा आंकड़ों से प्रतीत होता है कि अगर यही रफ्तार रही तो अक्टूबर, 2019 तक भारत के 75 से 85 प्रतिशत घरों में शौचालय होगा।

किसी भी पैमाने पर यह एक अच्छी उपलब्धि मानी जाएगी। मगर स्वस्थ एवं स्वच्छ भारत के लक्ष्य को हासिल करने के लिए कुछ बदलाव आवश्यक हैं। हमें ज्यादा से ज्यादा तादाद में सिर्फ शौचालय बनवाने से ध्यान हटाना होगा। वास्तविकता तो यह है कि इस दिशा में किये गए तमाम प्रयासों का आकलन कर पाना संभव भी नहीं है। हालांकि, अब भी रास्ते में कई एक चुनौतियां हैं जिन पर ध्यान देने की जरूरत है। मैंने उनमें से तीन सबसे प्रमुख चुनौतियों पर प्रकाश डालने की कोशिश की है।

शौचालय होने के बावजूद इस्तेमाल नहीं: शौचालयों के होने का यह मतलब नहीं है कि उसका उपयोग भी हो रहा है। यह भी हो सकता है कि उसका उपायोग दिन के किसी समय में, परिवार के कुछ सदस्यों द्वारा या सिर्फ किसी विशेष मौसम में ही किया जा रहा हो। यह भारत के लिए काफी बड़ी एवं अलग किस्म की समस्या है। मैंने यह समस्या अफ्रीकी देशों में *वाटर एड* में कार्य करते हुए कभी नहीं देखी थी। इन देशों में संसाधनों की काफी कमी है और सरकारी सहयोग भी बहुत कम है। इसके बावजूद उन देशों में स्वच्छता की कमान स्थानीय समुदाय के हाथों में है और काफी अलग और बेहतर ढंग से काम होता है। वहां के सरकारी कार्यक्रम शौचालय बनवाने से ज्यादा व्यवहारिक चीजों पर ध्यान देते हैं। परिणामस्वरूप, उन देशों में विकास की गति भारत से धीमी लग सकती है, मगर ग्रामीण समुदाय की स्वच्छता कार्यक्रमों पर अच्छी पकड़ है। क्योंकि वहां बुनियादी ढांचे की उपलब्धता और इसकी उपयोगिता के बीच का फासला काफी कम है।

जल्दबाजी के खतरे: भारत सरकार 'स्वच्छ भारत मिशन' को उच्च प्राथमिकता दे रही है। कम समय के लिए छोटे-छोटे लक्ष्य भी रखे गए हैं। यह दोधारी तलवार की तरह है। इस प्रकार की जल्दबाजी तेज क्रियान्वयन की तरफ तो ले जाएगी, मगर व्यवहार में बदलाव पर ध्यान दिए बिना। दरअसल, यह समस्या इस बात से भी उजागर होती है कि पूरे मिशन में प्रचार-प्रसार एवं जागरूकता फैलाने के लिए बजट में कितने कम खर्च का प्रावधान रखा गया है। जल्दबाजी में किए गए क्रियान्वयन का खतरा यह है कि समस्या से जुड़े कई पहलू दबे रह जाते हैं। जबकि ये सारे पहलू स्वच्छता के लिए किए जा रहे प्रयासों के टिकाऊ होने के लिए जरूरी हैं। इनमें ठोस व तरल कचरे और मल का प्रबंधन भी शामिल है।

घर के बाहर स्वच्छता: पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय के 'स्वच्छ भारत मिशन' के अन्तर्गत किए गए प्रयासों में घर और आसपास की स्वच्छता पर काफी अधिक ध्यान दिया जा रहा है। लेकिन संस्थागत व्यवस्था पर उतना ध्यान नहीं है जितनी बड़ी चुनौती है। अस्पताल और स्कूल विशेष चिंता के विषय हैं, क्योंकि इनके बारे में न तो कोई स्पष्ट निर्देश हैं और न ही बजट का प्रावधान। शौचालयों की मरम्मत एवं रखरखाव के लिए भी कोई कदम नहीं उठाए गए हैं।

ग्रामीण 'स्वच्छ भारत मिशन' की प्रगति को देखते हुए मैं यह कहूंगा कि यह सही दिशा में जा रहा है। पुराने स्वच्छता अभियानों की तुलना में इसके तहत उल्लेखनीय सुधार हुआ है। मगर स्वच्छ भारत की यह महत्वाकांक्षी योजना एक और कदम की अपेक्षा करती है। एक नए सामाजिक नियम की जरूरत है जिससे खुले में शौच करना एकदम अस्वीकार्य हो जाए। साथ ही साथ पर्यावरण की स्वच्छता को भी उतना ही महत्वपूर्ण बनाया जाए जितना घर के भीतर की साफ-सफाई। ऐसा करने के लिए इन चार क्षेत्रों में कार्य करने की आवश्यकता है:

जमीनी स्तर पर बदलाव की आवश्यकता: खुले में शौच की आदत को अस्वीकार्य बनाने के लिए आपसी संवाद की जरूरत है। स्वच्छता अभियान को कामयाब बनाने के लिए इस मोर्चे पर कुशल लोगों की कमी भी एक बड़ी बाधा है। जबकि यह अभियान की सफलता के लिए जरूरी है। इसलिए एक ऐसा तंत्र विकसित करने की जरूरत है जो प्रतिबद्ध लोगों की तलाश करें, उन्हें प्रशिक्षण दे। ताकि आगे चलकर ये लोग स्थानीय समुदाय को प्रेरित कर सकें।

सामूहिक प्रयास: केंद्र और राज्य सरकारों को पहले अपने-अपने क्षेत्रों में सुधार के लिए प्रयास करने चाहिए। इन्हें यह सुनिश्चित करना होगा कि सभी स्वास्थ्य केंद्र, स्कूलों एवं आंगनबाड़ियों में जल, स्वच्छता एवं सफाई की पर्याप्त सुविधा हो और सही तरीके से इनका रखरखाव किया जाए। इसके लिए विभिन्न मंत्रालयों एवं विभागों के बीच बेहतर तालमेल और भागीदारी की जरूरत है। अभी इसकी भारी कमी है।

स्वतंत्र मूल्यांकन व निगरानी: कार्यक्रम का लगातार मूल्यांकन होते रहना चाहिए। यदि हम सही तरीके से सत्यापन कर पाएं तो यह बड़ा बदलाव ला सकता है। इसके लिए सिर्फ शौचालयों की गिनती करना पर्याप्त नहीं है। स्वतंत्र मूल्यांकन से पहले शौचालयों के उपयोग और खुले में शौच से मुक्त समुदायों का सही से पता लगाना होगा। महज शौचालयों की संख्या को स्वच्छता का पैमाना नहीं माना जाना चाहिए।

सीख के हिसाब से खुद को ढालना: समय-समय पर पता करना जरूरी है कि जमीनी स्तर पर किस कदम से फायदा हो रहा है और किससे नहीं। उदाहरण के तौर पर, आंध्र प्रदेश में रैपिड एक्शन लर्निंग यूनिट्स जिसे वाटर एड समर्थन दे रहा है। इस प्रकार के तंत्र राज्य एवं केंद्र स्तर पर स्थापित करने की आवश्यकता है, जिससे समय-समय पर किए गए कार्य का आकलन और सुधार होता रहे।

स्वच्छ भारत मिशन के तहत खुले में शौच को हतोत्साहित करने और महिलाओं को वैसा ही अनुभव प्रदान करने के लिए (नीचे) महिला गप्प शौचालय की नींव रखी गई

अपर्णा पल्लवी / सीएसई

चल सखी गप्पालय!

पूरे दिन घर-गृहस्थी, खेत और मवेशियों के काम में व्यस्त रहने वाली ग्रामीण महिलाओं के लिए खुले में जाना अपने सुख-दुख को साझा करने, मेलजोल बढ़ाने और जानकारियों के आदान-प्रदान का अवसर भी होता है। ऐसे में घर की चहारदीवारी में बने शौचालय भला महिलाओं को कैसे पसंद आएंगे? इसी चुनौती से निपटने के लिए बने हैं गप्पालय

कुंदन पांडेय

सत्ता में आने के बाद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने जिन क्षेत्रों में सबसे ज्यादा दिलचस्पी दिखाई, उनमें से एक है 'स्वच्छ भारत अभियान'। इसके तहत संकल्प लिया गया कि 2 अक्टूबर 2019 यानी महात्मा गांधी की 150वीं जयंती तक पूरे देश को खुले में शौच की बुरी आदत से मुक्त कर दिया जाएगा। सरकार पुरजोर कोशिश कर रही है कि लोगों की खुले में शौच करने की प्रवृत्ति खत्म हो जाए। इसके लिए घर-घर शौचालय बनवाए जा रहे हैं। तमाम कोशिशों के बावजूद देखा जा रहा है कि लोग घर में शौचालय होने के बावजूद खुले में जाने की आदत नहीं बदल पा रहे हैं। सरकार के लिए यह एक बड़ी चुनौती है।

इसके चुनौती से निपटने के लिए पश्चिम भारत में करीब पांच साल पहले एक प्रयोग हुआ। महिलाओं के लिए ऐसा सामूहिक शौचालय बनाया गया, जहां वे शौच से निवृत्त होने के साथ-साथ आपस में बातें भी कर सकती थीं। यह सर्वविदित है कि ग्रामीण महिलाएं परंपरागत तौर पर समूह में शौच जाती हैं। इसके पीछे जंगली जानवर का डर और कई तरह का असुरक्षा बोध भी बड़ा कारण है। इसके अलावा समूह में शौच के लिए जाने से महिलाओं को आपस में मेलजोल बढ़ाने और जानकारियां साझा करने का मौका भी मिलता है। महाराष्ट्र के बुलढाणा जिले की मेहकर तहसील के डोनगांव में रहने वाली संगीता गौर का भी खुले में शौच को लेकर ऐसा ही मानना है। गांव के इर्द-गिर्द की झाड़ियां इन ग्रामीण महिलाओं को एक खास तरह की स्वतंत्रता, जरूरी गोपनीयता और आपस में घुलने-मिलने का मौका मुहैया कराती रही हैं। लेकिन दीवारों से घिरे शौचालयों में उन्हें यह अनुभव नहीं मिल पाता था। गौर ने बताया, "ये कोठरीनुमा शौचालय डराते हैं, क्योंकि हमें इसकी आदत ही नहीं है।"

इस समस्या के समाधान की शुरुआत दो साल पहले हुई जब एक नए अधिकारी राजेंद्र पाटिल ने सामूहिक शौचालय बनाने का प्रस्ताव रखा। गांव के लोगों ने पहले तो इसे सिरे से खारिज कर दिया। उनका सुझाव था कि जहां महिलाएं शौच के लिए जाती हैं, उस पूरे इलाके को एक दीवार बना कर घेर दिया जाए, ताकि पर्दा बना रहे। पाटिल को यह बात थोड़ी अटपटी लगी। जाहिर है कि दीवार पर्दा तो सुनिश्चित कर सकती है, लेकिन उससे साफ-सफाई की समस्या जस की तस बनी रहेगी। उन्होंने इसके लिए पैसा देने से मना कर दिया। यह बात ग्रामीणों को नागवार गुजरी। पाटिल उस घटना को याद करते हुए बताते हैं, "मैं गुस्से में गांव से चला आया।"

तनाव कुछ कम होने पर ग्रामीणों ने पाटिल को समझाया कि क्यों पारंपरिक तौर पर बनाए जा रहे सामूहिक शौचालय यहां सफल नहीं होंगे। ग्रामीणों के अनुसार, तीन साल पहले यहां पारंपरिक शौचालय बनाए गए थे। महिलाओं ने दो महीने के भीतर ही उन शौचालयों का उपयोग बंद कर दिया था। यह वर्ष 2007 के आसपास की घटना है। अब पाटिल भी गांव वालों से थोड़ा सहमत होने लगे। दोनों पक्षों में बातचीत का नया दौर चला और फिर एक रास्ता निकला। एक ऐसा शौचालय बनाया गया, जिसमें साफ-सफाई के साथ-साथ महिलाओं को ऐसा मौका दिया गया कि वे आपस में बातचीत कर सकें। वर्ष 2010 में तैयार इस शौचालय को नाम दिया गया 'महिला गप्प शौचालय'।

गांव के सरपंच दत्तात्रेय जयराम मगर बताते हैं कि ऐसे चार शौचालय परिसर हैं जिन्हें करीब 400 महिलाएं इस्तेमाल करती हैं। परिसर की एक इकाई में 14 शौचालय हैं।

डाउन टू अर्थ से फोन पर बात करते हुए इन लोगों ने बताया कि ये शौचालय एक पंक्ति में न होकर अर्धवृत्ताकार बनाए गए हैं। शौचालय के केबिन पर कोई दरवाजा नहीं है, क्योंकि औरतें दरवाजा लगाती नहीं हैं। केबिन की दीवार भी कम ऊंची है, ताकि भीतर बैठी महिलाएं एकदूसरे को देख सकें और बातचीत कर सकें। बाहर से पर्देदारी के लिए शौचालय के प्रवेश द्वार को एक अर्धवृत्त दीवार का स्वरूप दिया गया है। पानी की आपूर्ति के लिए प्रत्येक शौचालय में नल के बजाय एक केंद्रीय टंकी बनाई गई हैं। यह बेहद टिकाऊ और सस्ता मॉडल है। पानी नियमित रूप से केंद्रीय टंकी में भरा जाता है और मल-मूत्र एक भूमिगत टैंक में जमा होता है।

मजाक ही मजाक में इसका नाम 'महिला गप्प शौचालय' हो गया, जिसे महिलाओं ने काफी सराहा है। गांव की ही एक महिला कुसुम बाली का कहना है, "यह एक सुरक्षित और स्वस्थ विकल्प है। यहां हम एक-दूसरे से बात कर सकते हैं। सब कुछ बंद-बंद जैसा नहीं लगता। चहारदीवारी के बाद भी खुलेपन का एहसास रहता है।"

इन शौचालयों में 24 घंटे पानी की आपूर्ति सुनिश्चित करना पंचायत की जिम्मेदारी है। यहां रातभर बिजली रहती है। सफाई के लिए एक महिला सफाईकर्मी की व्यवस्था भी की गई है।

पहले गप्प शौचालय की सफलता को देखते हुए गांव में इसी तरह तीन और शौचालय बनाए गए। पाटिल के अनुसार, इस नए डिजाइन के अन्य लाभ भी हैं। यह पारंपरिक डिजाइन की तुलना में आधी जगह लेता है। इस पर आने वाली लागत (2.25 से 2.50 लाख रुपये) करीब दो-तिहाई से भी कम है। हालांकि, पाटिल का अब उस इलाके से तबादला हो गया है, लेकिन वे अब जहां कहीं भी जाते हैं, शौचालय के इस मॉडल की चर्चा जरूर करते हैं। वर्ष 2011 में जब गप्प शौचालय काफी चर्चा में था, तब जिला पंचायत के मुख्य कार्यपालन अधिकारी सदानंद कोचे ने कहा था कि इस मॉडल को पूरे जिले में फैलाना है।

यद्यपि लोगों के अनुसार यह शौचालय महिलाओं में बेहद लोकप्रिय रहा, लेकिन इसका आगे विस्तार नहीं हो पाया। कहते हैं कि इसके रखरखाव पर आने वाला खर्च काफी अधिक है। यह खर्च साल में तीन लाख रुपये तक पहुंच जाता है। सेप्टिक टैंक नहीं होने के कारण तीन-चार महीने पर इसकी सफाई करानी पड़ती है, जिसकी वजह से लोग घरों में निजी शौचालय नहीं बना रहे हैं। प्रायः लोग महिलाओं की दिक्कत को समझते हुए ही घरों में शौचालय बनवाते हैं। इस सामूहिक शौचालय की वजह से निजी शौचालय बनाने का काम नहीं हो पा रहा है। करीब एक हजार घरों के इस गांव में बमुश्किल पांच सौ घरों में निजी शौचालय बने हैं। सरपंच का मानना है कि गांव में निजी शौचालय को प्रोत्साहन देना हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए। इसके बाद बचे हुए लोगों को सामूहिक शौचालय की सुविधा दी जाए।

लेकिन डोनगांव के इस प्रयोग ने लोगों को यह सोचने पर मजबूर कर दिया कि संपूर्ण स्वच्छता का लक्ष्य पाने के लिए सरकार को नए तरीकों पर भी विचार करना चाहिए। लोगों की सोच में बदलाव के साथ-साथ सरकार को भी अपने सोचने के तरीके को बदलने की जरूरत है। ग्रामीण क्षेत्रों में पानी की कमी, रखरखाव की दिक्कतें और सामूहिक इच्छाशक्ति का अभाव एक कटुसत्य है, लेकिन इसकी आड़ लेकर लक्ष्य से भटका नहीं जा सकता। बेहतर समाधा के लिए लोगों की दिक्कतों को व्यवहारिक नजरिए से समझा जाना आवश्यक है।

ये शौचालय एक पंक्ति में न होकर अर्ध वृत्ताकार बनाए गए हैं। शौचालय के केबिन की दीवार कम ऊंची है, ताकि भीतर बैठी महिलाएं एक दूसरे को देखकर बातें कर सकें

कुछ नए कदम स्वच्छता की ओर

उड़ीसा: कोरापुट ने खुले में शौच के खिलाफ मोर्चा खोला

भारत के सबसे पिछड़े जिलों में से एक में 11 गांवों के 500 से अधिक परिवारों ने खुले में शौच को अंगूठा दिखा दिया। इन्होंने व्यक्तिगत तौर पर निर्मित शौचालयों का इस्तेमाल शुरू कर दिया है। इस लक्ष्य को प्राप्त करना ग्रामीणों के लिए आसान नहीं था। खुले में शौच के खिलाफ 'स्वच्छ भारत मिशन' के लिए ग्रामीणों की प्रारंभिक प्रतिक्रिया नकारात्मक थी, लेकिन स्थानीय प्रशासन ने उम्मीद नहीं छोड़ी। लोगों को खुले में शौच के खतरों के प्रति जागरूक बनाने के लिए जिला प्रशासन ने पोस्टर, नुक्कड़ नाटक आदि के माध्यम से प्रेरक अभियानों की एक श्रृंखला शुरू की है।

उत्तर प्रदेश : डरोरा गांव मानता है शिक्षा को एक शक्तिशाली हथियार

गीत 'नन्हे मुन्ने बच्चे तेरी मुट्ठी में क्या है...' याद है न? उत्तर प्रदेश के डरोरा गांव के लोगों ने 'स्वच्छ भारत मिशन' को कामयाब बनाने के लिए इस प्रसिद्ध गीत से प्रेरणा ली है। गांव के प्राथमिक स्कूलों में छात्रों को साफ-सफाई का महत्व बताया जाता है, और वे अपने परिवारों तक इसका प्रसार करते हैं। इस बढ़ती जागरूकता के कारण गांव निर्मल हो गया है। स्वच्छ भारत अब डरोरा गांव के ज्यादातर लोगों के लिए एक गीत बन चुका है ।

हरियाणा: "मेरे घर में शौचालय बनाओ पिया जी..."

यदि आप यह सोचते हैं कि गांव की महिलाएं अभी भी पुरुषों की छाया में रहती हैं, तो हरियाणा के ऊंटकर गांव की महिलाएं आपको गलत साबित कर देंगी। अपने आसपास के क्षेत्रों की सफाई सुनिश्चित करने के लिए गांव की महिलाएं नियमित रूप से बैठकों का आयोजन करती हैं, जिनमें स्वच्छता को लेकर लंबी चर्चाएं होती हैं। इनका मानना है कि बच्चे गांव का भविष्य होते हैं और इसलिए माता होने के नाते यह उनकी जिम्मेदारी है कि वे बच्चों के लिए उदाहरण बनें। उन्होंने स्वच्छता के संदेश को प्रसारित करने के लिए एक गीत भी बनाया है- "मेरे घर में शौचालय बनाओ पिया जी..."